# भूमिका

भारत आजाद हुए 70 वर्ष होने को आए लेकिन आज भी ऐसी अनेक जातियां है जो हाशिए पर हैं या समाज से बिलकुल कटी हुई हैं या यों कहें समाज उन्हें स्वीकार करना नहीं चाहता। यदि सभ्य समाज के लोगों की उन पर नजर जाती भी है तो स्वार्थ सिद्धि के लिए या लोभ लिप्सा के लिए। इन लोगों पास स्थाई रूप से रहने के लिए न तो अपनी भूमि होती है और न ही जीवन निर्वाह के लिए कोई काम -धंधा। इस समाज ने कहने को तो उनको काम दिया है किंतु क्या वास्तव में वो काम हैं ? नहीं वह कोई काम नहीं है वह तो आदमजात को फिर से जानवर बनाए जाने वाली प्रक्रिया है। ऐसी स्थिति में ये लोग जीवन निर्वाह के लिए गलत काम-धंधों की ओर अपना रुख कर लेते हैं। अब इन लोगों ने चोरी-डकैती, छीना-झपटी, मार-काट, शराब बेचना, देह व्यापर आदि को अपना पेशा बना लिया है। अधिकांशतः ये वो लोग हैं जो गलियों-सड़कों में घूमते या अखबारों की अपराध सुर्ख़ियों में दिखाई दे जाते हैं। कंजर, सांसी, नट, मदारी, सँपेरे, पारदी, हाबुड़े, बंजारे, बावरिया, कबूतरे आदि। ऐसी न जाने कितनी जनजातियां हैं जो सभ्य समाज के इर्द-गिर्द अपना जीवन निर्वाह कुछ इसी प्रकार करती आ रही हैं।

इनके अपने अलग नियम-कानून हैं , देवी-देवता हैं और काम-धंधे हैं। बोलने की अलग भाषा शैली हैं। माना जाता है ये लोग अपने कौल (वचन) के पक्के होते हैं। स्वयं को जीवित रखने के लिए किसी भी हद तक जा सकते हैं। इनका जीवन व्यतीत करने का तरीका-उद्देश्य सभ्य समाज के तौर-तरीकों से भिन्न होता है। ये सब चिन्ह उनकी एक अलग संस्कृति को दर्शाते हैं जो उन्हें सभ्य समाज की श्रेणी से अलग रखती है।

आज ये लोग गांवो से शहरों की ओर अपना रुख कर रहे हैं और खाली पड़ी किसी जमीन पर अपना बसेरा बनाकर रह रहे हैं। इन्होनें अपना पुराना पेशा आज भी अपना रखा है और शहरों की छोटी-छोटी बस्तियों में धड़ले से शराब बेच रहे हैं। इनके द्वारा सड़को व गली-मोहल्लों में मार-काट व लूटपाट को अंजाम दिया जा रहा है। लेकिन इनमें से कुछ लोग ऐसे भी हैं जो अपने काम-धंधो व रुढ़िवादी विचारों का त्याग कर अपने बच्चो को शिक्षा दिलाने का भरपूर प्रयास कर रहें हैं।

दोनों लेखकों ने कथा के मुख्य पात्र के रूप में स्त्री को केंद्र में रखा है। 'रेत' में रुक्मिणी है तो 'अल्मा कबूतरी' में उपन्यासिक कथा के आधार पर अल्मा तीसरी पीढ़ी की है। दोनों स्त्रियों में बहुत कुछ समानता हैं। दोनों स्त्रियाँ जानती हैं पुरुष स्त्री के अंगों का प्यासा रहता है और वह उसे पाने के लिए किसी भी हद तक गिर

सकता है। इसलिए दोनों अपनी यथावत परिस्थितियों से भागती नहीं हैं बल्कि उसी को आधार बनाकर समाज के विस्तृत फलक पर फैली विषमताओं का डट कर सामना करती हैं। कहीं न कहीं इन लोगों इस बात का एहसास हो गया है कि अपना और अपनी जाति का उद्धार केवल तभी किया जा सकता है जब वे और उनका परिवार शिक्षा और राजनीति में अपनी सहभागिता निभाए गा। यही कारण है कि 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में भूरी समाज से टक्कर लेते हुए और अपने शारीर का सौदा करके भी अपने बेटे रामसिंह को पढ़ाती है ताकि वह भविष्य में सम्मान भरा जीवन व्यतीत कर स के। वहीं, 'रेत' उपन्यास की नायिका रुक्मिणी अपने बेटे का दाखिला भी प्राइवेट स्कूल में करवाती है और स्वयं राजनीति के क्षेत्र में उतरती है। समाज आज भी इन लोगों को स्वीकार नहीं कर पा रहा है यह जीवन का कटु सत्य है। इनमें से कुछ लोग शिक्षित हैं किंतु सम्मान न मिलने के कारण अपने पुराने धंधो की तरफ जाने को विवश हैं तो कुछ लोग जाति विशेष को छु पाकर समाज में बने रहने का प्रयत्न करते हुए कुछ नए कार्यो को अपना रहे हैं।

अंगेजों के गजट-गजेटियरों में उनके नाम 'अपराधी काबीले' या 'सरकश जन-जातियाँ' हैं। भारत को आजाद हुए लगभग 70 वर्ष हो चुके हैं किंतु स्वतंत्र भारत में समाज की मुख्यधारा से बाहर इन लोगों की लड़ाई आज भी जारी है। आज ये लोग हमारे घरों की दीवारों पर कूदते-फांदते दिख जाते हैं और हम उनका अपने साधे गए निशाने से शिकार कर सुख की अनुभूति का एहसास पाते हैं। आज ये लोग चोट व ठोकरे खा-खाकर इतने कठोरहृदयी हो चुके है कि स्वयं को बचाने के लिए सामने वाले को जान से मारते हुए सोचते तक नहीं हैं। जी हाँ मैं बात कर रहा हूँ- कबूतरा और कंजर जनजातियों की।

समाज एक ओर तो प्रगतिशीलता की बातें करता नहीं थकता है दूसरी तरफ अपनी रूढियों से निकल नहीं पाया। एक तरफ वह समाज है जो सभ्य समाज की परिधि में आने के लिए झटपटा रहा है दूसरी तरफ वह समाज है जो इस राह पर चलने वालों के पैरो में बेड़ियाँ डालने का निरंतर प्रयास कर रहा हैं। मेरे शोध का उद्देश्य इन दोनों पक्षों को निष्पक्ष भाव से समाज के सामने लाना है। कबूतरा और कंजर जनजातियों के माध्यम से आज के समाज की वास्तविक स्थिति का आंकलन किया जाएगा। इस शोध द्वारा यह देखने का प्रयास किया जाएगा कि समाज उन्हें किस नजर से देखता है ? क्या सभ्य समाज की विचारधारा में इन पिछड़े लोगों के प्रति कोई बदलाव आया या नहीं ? भावी समय और परिस्थितियों के साथ संबंधित प्रश्नों को जोड़कर उनका उचित हल खोजकर प्रस्तुत करना ही मेरे शोध का मूल उद्देश्य होगा।

यदि शोध के मूल की बात की जाए तो ***प्रथम*** अध्याय ***'जीवन परिचय और समय से साक्षात्कार'*** है। इन अध्याय में दोनों लेखकों और उनके समय से परिचित कराने की कोशिश की गई है। इस अध्याय में उनके संघर्षय जीवन को सामने लाने के साथ ही उनके द्वारा उन घटनाओं को सामने लाने का प्रयास किया गया है, जिन घटनाओं ने तत्कालीन समाज को झकझोर कर रख दिया था। जैसे भगवानदास मोरवाल बताते है कि उन्होंने 1984 में घटित घटनाओं को समीप से देखा और जीया है। साल 1984 भारत के इतिहास में एक त्रासदी भरे इतिहास के रूप में जाना जाता है। एक तरफ इसी साल 31 अक्तूबर देश की प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी की उसके ही अंगरक्षकों द्वारा हत्या और बाद कुछ दिनों तक पूरे उतर भारत के कुछ राज्यों में भड़के सिख विरोधी दंगे। इतना ही नहीं, इस घटना के ठीक एक महीना बाद 2 दिसंबर की रात को हुआ भोपाल गैस कांड। भोपाल स्थित एक अमेरिकन कंपनी यूनियन कार्बाइड के प्लांट से रिसी जहरीली गैस ने हजारों लोगों को मौत की नींद सुला दिया था। मैत्रेयी पुष्पा बताती है कि उन्होंने अपने जीवन में अनेक आलोचनाओं का सामना किया, फिर भी महिलाओं के मान-सम्मान और उनके स्वतंत्र विचारों को लेकर अपनी आवाज हमेशा बुलंद रखी। उन्होंने, स्त्री संबंधित हकों को लेकर अपनी लेखनी और आवाज को कभी कमजोर नहीं पड़ने दिया। ***द्वितीय*** अध्याय ***'कबूतरा जनजाति और कंजर जनजाति का तुलनात्मक अध्ययन '*** है। इस अध्याय में कबूतरा जनजाति और कंजर जनजाति के इतिहासों को सामने लाने का प्रयास किया गया है। **तृतीय** अध्याय ***'अल्मा कबूतरी' और 'रेत' उपन्यास के समाजिक पक्षों का तुलनात्मक अध्ययन*** है। इस अध्याय के अंतर्गत समाज में स्त्रियों पर हो रहे शोषण को गहनता से समझने का प्रयास किया गया है। कबूतरा जनजाति और कंजर जनजाति के माध्यम से समाज में फैले राजनीतिक कुचक्र, समाज में स्त्री के संघर्षमय जीवन और समाज में फैली उन समस्याओं को सामने लाने का प्रयास किया है, जिन समस्याओं को इन जनजातियों से संबंधित लोग तो झेल ही रहे हैं। साथ में सभ्य समाज के लोग भी इन समस्याओं की चपेट में आने से नहीं बच सके हैं। ***चतुर्थ*** अध्याय ***'अल्मा कबूतरी' और 'रेत' में सांस्कृतिक पक्षों एवं शिल्प विधान का तुलनात्मक अध्ययन*** है। इस अध्याय में कबूतरा जनजाति और कंजर जनजाति के सांस्कृतिक पक्षों और उनके रीति-रिवाजों के साथ शिल्प विधान पर भी विचार किया गया है। इस अध्याय में यह बताने का प्रयास किया गया है कि इन जनजातियों की अपने अलग नियम-कानून और रीति-रिवाज होते हैं, जो सभी समाज के लोगों से मेल नहीं खाते हैं। इनके उत्सव-समारोह और जीने का तौर-तरीका सभ्य समाज के लोगों

से अलग होता है। आखिर उनका रहन-सहन सभ्य समाज के लोगों से क्यों है ? इस अध्याय के माध्यम से इस प्रश्न हा हल भी खोजने का प्रयास किया गया है।

भारतीय समाज का एक बड़ा हिस्सा इन जन-जातियों का हैं। दालित वर्ग पर तो पिछले कुछ दशकों से लिखा जा रहा है किंतु इन जनजातियों के संदर्भ में अपनी लेखनी को हथियार विरले लोगों ने ही बनाया है। भगवानदास मोरवाल और मैत्रेयी पुष्पा उन विरले लोगों में अपना स्थान बनाने में सफल हुए हैं। समाज में जब तक इनकी स्थिति में कोई सुधार नहीं आता तबतक इन जनजातियों पर शोध की आवश्यकता बनी रहेगी। सरकार कागजों में तो प्रतिवर्ष इन जन-जातियों के लिए अपने कानून में संशोधन कर सभ्य समाज की परिधि में लाने का प्रयास कर रही है किंतु प्रत्यक्ष रूप में इनकी स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ है। आज भी ये लोग सताए जाते हैं। इसकी स्त्रियों के साथ यौन-शोषण की घटनाएँ आए दिन सुर्खियों में रहती हैं। आज भी कई इलाके ऐसे हैं जहाँ मीडिया नहीं पंहुच सका वहां ऐसी घटनाएँ मात्र दिनचर्या का हिस्सा बनकर रह जाती हैं। ये सब बातें इस शोध को आधार देने में अपनी भूमिका अदा करती है।

प्रस्तुत लघु शोध-प्रबंध प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष कई संलग्न मेहनत एवं उम्मीदों का सम्मिश्रण है। अतः इसे पूर्णता प्रदान करने के लिए जिन लोगों का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग प्राप्त हुआ है उन सभी के प्रति सदैव शुक्रगुजार रहूँगा।

सर्वप्रथम मैं **हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग** के प्रति आभारी हूँ, जिसने मुझे साहित्य और शोध के मूल्यों , सिद्धांतों एवं सीमाओं से अवगत कराया। मैं अपने शोध निर्देशक आदरणीय **डॉ. अशोक नाथ त्रिपाठी** जी का आभारी हूँ। मैं स्वयं को खुश किस्मत समझता हूँ कि इनके कलेवर में रहकर यह लघु शोध-प्रबंध पूर्ण करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। मैं साहित्य विद्यापीठ की अधिष्ठाता **प्रो. प्रीति सागर** और हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग के विभागाध्यक्ष आदरणीय **प्रो. कृष्ण कुमार सिंह** का तहे दिल से आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने अपनी ज्ञान -गंगा से समय-समय पर मेरी शोध दृष्टि को सिंचित किया तथा शोध के प्रारम्भ से अंत तक मुझको अपना प्रशिक्षणात्मक निर्देशन प्रदान करते रहे।

मैं आभार प्रकट करता हूँ , **डॉ. बीरपाल सिंह यादव** और **डॉ. रामानुज अस्थाना** का जिन्होंने अध्ययन-अध्यापन के समय विभिन्न मुद्दों पर अपनी वैज्ञानिक दृष्टि से विषय-वस्तु की समझ के साथ भावनात्मक सहयोग भी दिया।

मैं जीवन के मूल स्रोत अपने **माता श्रीमती जगमती, पिता श्री धर्मजीत सिंह** और परिवार के प्रति आभारी हूँ जिन्होंने मेरे जीवन की कठिन परिस्थितियों में हाथ थामें रखे और हौसलों को टूटने न दिया और समय-समय पर अपनी मौजूदगी महसूस कराते रहें।

मैं आभार प्रकट करता हूँ अपने अजीज मित्रों **अनीता**, **सुमन**, **राकेश कुमार, अतुल कांबले** , **कुमार गौरव, रोशन प्रसाद, साधना, ममता, उषा ठाकुर, लता, आरती शर्मा, मनीषा यादव , विजय मौर्य, लक्षमण, नौशाद अली, शाहिद अली , नरेन्द्र कुमार, नीरज, मेघा, काजल, संजीव झा, लोकेश कुमार, विवेक कुमार** और **देवेंद्रनाथ त्रिपाठी** जिन्होंने अपने मित्रवत व्यवहार से मेरे जीवन में सदैव ईमानदारी, विश्वास, कर्तव्यनिष्ठता की सुगंध को बिखेरा और मेरे इस लघु शोध प्रबंध के निर्माण में अटूट सहयोग दिया।

मैं अंत में आभार प्रकट करता हूँ कानपुर विकास प्रकाशन के **पंकज कुमार** जी का जिन्होंने मुझे मेरे शोध विषय से संबंधित पुस्तकों की जानकारी दी और उन्हें उपलब्ध करवाया।